Vol. 6, Issue. 1, (January 2017) pp. 40-47 Sangeet Galaxy
ISSN: 2319-9695

संगीत ग्रन्थों का संरक्षण व प्रकाशनः एक विवेचन

डॉ0 दीपक कुमार त्रिपाठी
लखनऊ, उत्तर प्रदेश
Email: dr.deepakkrtripathi@gmail.com

सारांश

संगीत एक प्रदर्शनकला है तथा गुरूमुखी विद्या है जिसका शिक्षण गुरू–शिष्य परंपरा के अनुरूप प्राचीनकाल से अनवरत् होता आ रहा है। संगीत में संस्थागत शिक्षण प्रणाली के सूत्रपात के साथ विषयानुरूप पाठ्यक्रम की आवश्यकता हुई। संगीत ग्रन्थों के आधार या शास्त्रों के अनुशीलन के बिना यह कार्य कठिन था। इस हेतु संगीत ग्रन्थों की खोज की गई और उनके प्रकाशन हेतु विद्वानों ने अपने अथक प्रयास किये। हमारी संगीत ग्रन्थों की परंपरा अति प्राचीन है जिसका संकलन संरक्षण और प्रकाशन आज से लगभग 150 वर्ष पूर्व एक जटिल तथा दुरूह कार्य था, तब आजकल की भांति आधुनिक तकनीकी का अभाव था। इस कार्य में स्वतंत्रता के पूर्व भारतवर्ष के कुछ रियासतों व रजवाड़ों ने संगीत ग्रन्थों के संकलन व प्रकाशन में अपना सहयोग किया ताकि संगीत की अमूल्य धरोहर सुरक्षित हो सके। नाट्यशास्त्र ग्रन्थ जो कि संगीत का प्राचीनतम ग्रन्थ माना जाता है उसके प्रकाशन के बाद संगीत के अन्य ग्रन्थ जैसे वृहद्देशी ,दत्तिलं, व संगीतरत्नाकर ग्रन्थो के संकलन व प्रकाशन के प्रयास किए गए। मध्यकाल के ग्रन्थों को संकलित कर उनके प्रकाशन में पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे जी ने संगीत शिक्षा के क्षेत्र में संस्थागत शिक्षण की नींव रखी। आज संगीत स्कूलों से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक एक प्रतिष्ठित विषय के रूप में स्थापित है और संगीत में शोधकार्य हो रहें है। संगीत में प्रकाशन का कार्य आज वृहत स्तर पर हो रहा है। संगीत के क्षेत्र में हमारी प्राचीन ग्रन्थ सम्पदा का लाभ हमें आधुनिक समय में किस प्रकार प्राप्त हो सकता है जिसे हमारे विद्वानों और शास्त्रकारों नें प्रयत्न करके हमें सुलभ करवाया। आज कुछ संगीत ग्रन्थों का पिछले 70 वर्षों से पुनः प्रकाशन ही नही हुआ जिनमें से कुछ तो पुस्तकालयों में अपनी आयु भी पूर्ण कर चुके है। संगीत में प्रकाशन के क्षेत्र में आज पुनरावृत्ति हो रही है या मौलिक सन्दर्भ के लिए मूल ग्रन्थ पुनः प्रकाशन के अभाव में सर्वसुलभ नही है जिससे शोध कार्य भी प्रभावित होता है। आज तकनीकी का युग है और सूचना तथा संचार माध्यमों ने समूचे विश्व को एक सूत्र मे बांधा है। तकनीकी साधनों द्वारा संगीत में ग्रन्थों का संरक्षण व प्रकाशन तथा शोध का लाभ वर्तमान समय में किस प्रकार सुनिश्चित हो इसका चिंतन आवश्यक है।

शब्द सूत्र – संगीत ग्रन्थ, संकलन, संरक्षण, प्रकाशन, इन्टरनेट, डिजिटल

संगीत को शब्दों में बांधा नही जा सकता और न ही इसकी महिमा का बखान कोई शास्त्र कर सका है इस हेतु राग हिण्डोल में रचित एक ध्रुवपद की पंक्तियां सहज ही स्मृत हो उठती है–

"स्थाई

नाद वेद अप्रंपार पार हूँ न पायो गुनि
गाए गाए थके सब सुर नर मुनि जन देव

अंतरा

केते गुनि गंधर्व किन्नर रचपच हार बैठे
किन हूँ न पायो तेरो सकल श्रेष्ठ नर मेव।।"[1]

सुर, नर, मुनि, गंधर्व किन्नर आदि संगीत की महत्ता गाकर के थक गये और शास्त्र की रचना में हार गये अतः साधरण मनुष्य के वश मे संगीत की व्याख्या करने की शक्ति नही है। किन्तु जब व्यवहार में कोई कला या शिल्प विकसित होता है तब उसके शास्त्र की पकिल्पना होती है और सिद्धान्त स्थापित होते है। संगीत युगों–युगों से मानव की सांस्कृतिक यात्रा का सहचर रहा है।

सांगीतिक ग्रन्थों के प्रकाशन की परंपराः

अनेकानेक संगीत ग्रन्थों की रचना भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र (200 ई0 पूर्व से 100 ई0 के मध्य) से लेकर आधुनिक काल में पं0 विष्णुनारायण भातखण्डे जी के समय (1860 से 1936) तक हुई इनमें सभी ग्रन्थ अधिकतर संस्कृत भाषा में ही रचित हैं। सांगीतिक ग्रन्थ परंपरा को अध्ययन व शोध के अनुसार विद्वानों इसे तीन कालखण्ड में विभाजित किया है।

1– प्राचीनकाल (भरतमुनि के नाट्यशास्त्र से संगीतरत्नाकर ग्रन्थ का कालखण्ड)

2– मध्यकाल (संगीतरत्नाकर से 1800 ई0)

3– आधुनिक काल (1801 से वर्तमान काल तक)

प्राचीन तथा मध्यकालीन ग्रन्थ हस्तलिपि, पाण्डुलिपि, ताम्रपत्र व भोजपत्र के स्वरूप में प्राप्त होते थे। भारत में मुद्रण और प्रकाशन के लिये साधन उपलब्ध न थे। संगीत ग्रन्थों के संकलन, संरक्षण व रचना हेतु भारतवर्ष के कुछ रजवाड़ों व रियासतों का अहम योगदान रहा है। जिनमें संगीत के शास्त्रीय आाधारपरक तथ्यों के संबंध में प्रामाणिक ग्रन्थ के रूप में सर्वप्रथम भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र प्राप्त होता है। जिसे पंचम वेद की संज्ञा से गुनिजनों ने विभूषित किया है।

"न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।

ना सौ योगो न तत्कर्मं नाट्येऽस्मिन यत्र दृश्यते।।[2]

अर्थात ऐसा कोई ज्ञान या शिल्प (कारीगरी), विद्या, कला योग एवं कर्म नही है जो हमे इस नाट्यशास्त्र में दिखाई न पड़ता हो।

नाट्य के अभिन्न अंग स्वरूप संगीत का विवेचन इस ग्रन्थ में 28 से 34वें अध्याय तक मिलता है। नाटय्शास्त्र जैसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ के प्रकाशन के संबधं मे प्राप्त जानकारी में ठाकुर जयदेव सिंह जी के अनुसार "1826 ई0 शती में एच0 एच0 विल्सन ने 'हिन्दू रंगमंच' पर अंग्रेजी में एक ग्रन्थ प्रकाशित किया और उसमें उन्होनें यह खेद व्यक्त किया कि जान पड़ता है कि भरत का नाट्यशास्त्र सर्वदा के लिए लुप्त हो गया है। 1865 ई0 शती में एफ0 हाल ने 'दशरूपक' ग्रन्थ प्रकाशित किया। उस समय उन्हें नाट्यशास्त्र का कुछ अंश उपलब्ध हो गया था जिसको 'दशरूपक' के अनुबन्ध के रूप में प्रकाशित किया। 1874 ई0 में हेमन नामक एक जर्मन विद्वान ने नाट्यशास्त्र में वर्णित विषयों पर एक विद्वतापूर्ण लेख प्रकाशित किया। उन्हें नाट्यशास्त्र की एक हस्तलिखित प्रति मिल गई थी। अब यूरोपीय विद्वानों की इसकी विशेषता का अनुभव हुआ और वे इसकी खोज करने लगे। फ्रांस के विद्वान रेग्नां ने 1880 में इसका 17वां अध्याय और 1884 में 15वें अध्याय का एक अंश और 16वां अध्याय समग्र प्रकाशित किया। 1884 में ही इसका छठा और सातवां अध्याय भी प्रकाशित हुआ। 1888 में फ्रांसीसी विद्वान जे0 ग्रोसे ने इसका 28वां अध्याय प्रकाशित किया। .....1884 ई0 शती में दो भारतीय विद्वानों ने मूल ग्रन्थ को बम्बई से काव्यमाला के अन्तर्गत

प्रकाशित करवाया। इसके अनन्तर ग्रोसे ने 1898 में उस समय तक उपलब्ध हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर इसका 1 से 14 अध्याय तक का एक संस्करण प्रकाशित किया।"[3]

इस ग्रन्थ के संकलन व प्रकाशन में महाराजा सयाजीराव बड़ौदा ने अपना महत्वपूर्ण सहयोग देते हुए दक्षिण भारतीय विद्वान प्रो0 रामकृष्ण कवि को इस ग्रन्थ को पूर्ण प्रकाशन के उद्देश्य से उन्हें नियुक्त किया और श्री कवि ने नाट्यशास्त्र की प्रतियों का संकलन किया। इसी बीच दक्षिण भारत से ही 'अभिनव भारती' जो कि नाट्यशास्त्र की टीका है जिसकी रचना 10वीं शती में अभिनवगुप्त द्वारा की गई, प्राप्त हुई। मद्रास राजकीय प्राच्य पाण्डुलिपि पुस्तकालय ने अभिनव भारती की प्रति बनवाई और सन् 1920 में प्रो0 रामकृष्ण कवि जी ने इसे प्राप्त कर नाट्यशास्त्र के प्रकाशन का कार्य शुरू किया। 1926 ई0 में गायकवाड़ ओरियन्टल सीरीज के अन्तर्गत नाट्यशास्त्र का प्रथम भाग, सन् 1934 में दूसरा भाग, सन् 1954 में इसका तीसरा भाग तथा प्रो0 रामकृष्ण कवि के देहान्त के बाद 1964 में जे0 एस0 शास्त्री जी के द्वारा इसका चौथा भाग प्रकाशित हो सका।

इस प्रकार संगीत के प्राचीनतम् ग्रन्थ के प्रकाशन का उद्भव संभव हो सका। प्राचीन काल के ग्रन्थों में भरत के पुत्र दत्तिल द्वारा रचित 'दत्तिलं', मतंगकृत 'वृहद्देशी', जयदेवकृत 'गीतगोविन्द' व जग्देकमल्लकृत 'संगीत चूड़ामडि' आदि ग्रन्थ, नाट्यशास्त्र के बाद और संगीतरत्नाकर के कालखण्ड के मघ्य रचे गए। जिसमें वृहद्देशी का प्रकाशन सन् 1928 में त्रावणकोर की महारानी महामहिम श्रीसेतुलक्ष्मी के शासन में के0साम्बशिव शास्त्री जी द्वारा वहां के राजकीय मुद्रणालय में किया गया और इसी क्रम में सन् 1930 में दत्तिलं का प्रकाशन किया गया। वृहद्देशी ग्रन्थ का सम्पूर्ण भाग प्राप्त न किया जा सका तथा इस संबंध में इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ के प्रो0 डॉ0 अनिल बिहारी व्योहार जी ने इस ग्रन्थ के प्रकाशन में कार्य किया जिसका सम्पादन बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय की पूर्व विभागाध्यक्ष डॉ0 प्रेमलता शर्मा जी ने किया। "इसका पहला भाग सन् 1992 में तथा दूसरा भाग 1994 में प्रकाशित हुआ।"[4] स्वयं डॉ प्रेमलता शर्मा जी के अनुसार – "The text available to Pt. K. Sambshiva Sastri, is incomplete and it has not been possible to discover another manuscript in the last seventy years, that could accord access to the complete text."[5] इसी क्रम में प्राचीन काल के अंतिम ग्रन्थ संगीतरत्नाकर का प्रकाशन अति महत्वपूर्ण माना गया। संगीतरत्नाकर सप्तअध्यायी है तथा संगीत का यह एकमात्र ग्रन्थ है जिसपर सात टीकाऐं लिखी हुई है जिसमें सिंहभूपाल की सुधाकर टीका तथा कल्लिनाथ की कलानिधि टीका प्रमुख है। इसका सम्पादन एस0 सुब्रहमण्यिम् शास्त्री द्वारा सन् 1943 में किया गया जिसे अड्यार संस्करण कहतें है।

इस संबंध में डॉ0 तेजसिंह टाक जी के अनुसार "आचार्य शारंगदेव ने संगीत रत्नाकर नामक विशाल ग्रन्थ इतने विश्वास से लिखा कि उसमे कहीं सन्देह नही है। इसलिए वह अपने आपको निःशंक कहतें है। उन्हानें संगीत संबंधी ज्ञान ऐसा प्रस्तुत किया कि यह ग्रन्थ परवर्ती ग्रन्थकारों का आधार ग्रन्थ बन गया। आज भी संगीत संबंधी ग्रन्थ बिना संगीत रत्नाकर के नही लिखा जा सकता है। अभी तो रत्नाकर का ग्राम मूर्छना वाला भाग समझा जाना शेष है इसलिए संगीत रत्नाकर के रागों को गाया नही जा सकता। आचार्य बृहस्पति ने कुछ जातियों को लक्षणों के आधार पर तैयार करके आकाशवाणी से गवाया था। डॉ0 प्रेमलता शर्मा ने भी प्राचीन संगीत को समझने में समय लगाया और गीतकों को गवाया। हमें एक नवीन सूत्र समझ में आ रहा है कि संगीतरत्नाकर में रागों के वर्णन में अनेक रागों की ऋतुएँ बताई गई है जिनमें से सब तो नही लेकिन वर्षा ऋतु के राग तो हमारे विचार से आधुनिक मल्हार जैसे ही रहे होंगे। संगीतरत्नाकर का

'षड्जग्राम और 'टक्कराग' वर्षा ऋतु के राग है। इस ग्रन्थ पर यदि विद्वान समर्पित भाव से समय लगाए तो सम्भवतः रत्नाकर के स्वरों का ज्ञान हो सकेगा जिससे हमारी विशाल संगीत धरोहर जो बन्द खजाने में पड़ी है, से संगीत जगत धन्य हो सकेगा।"[6] आचार्य पार्श्वदेव कृत ग्रन्थ संगीत समयसार भी 13वीं शताब्दी का ग्रन्थ माना जाता है। जिसे संगीत रत्नाकर के कुछ समय बाद ही लिखा गया। आचार्य बृहस्पति जी ने इसका हिन्दी अनुवाद व सम्पादन 1977 ई0 में किया गया। पं0 शारंगदेव के ग्रन्थ संगीत रत्नाकर (13वीं शताब्दी) के बाद के ग्रन्थों को मध्यकाल के ग्रन्थ माना जाता है।

पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे जी ने इन ग्रन्थों के संकलन व प्रकाशन के लिए अभूतपूर्व प्रयास किए। प्रमुख रूप से 17 संस्कृत ग्रन्थ जो कि भातखण्डे जी के काल में प्रकाशित हुए जिनमें पांच ऐसे ग्रन्थ है जो कि पूर्ण रूप से दक्षिण भारतीय संगीत का विवेचन प्रस्तुत करतें है जिनका शुद्ध सप्तक मुखारी के अनुरूप है, वें इस प्रकार है "1–'स्वरमेलकलानिधि' रामामात्य, (1550 ई0), 2–'रागविबोध' सोमनाथ, (1609 ई0), 3–'चतुर्दण्डिप्रकाशिका' पं0 व्यंकटमुखी, (1635 ई0), 4–'संगीतसारामृत', पं0 तुलजा भोंसले (1729–1735) ई0 तथा 5–'रागलक्षण', विद्वान मंडली के द्वारा रचित हुए।

उपरोक्त ग्रन्थानुक्रम में सात ऐसे ग्रन्थ है जिनका शुद्ध सप्तक मुखारी है किन्तु उनका विवेचन हिन्दुस्तानी संगीत पर केन्द्रित है। जिनमें अकबर के समकालीन तीन ग्रन्थ पुण्डरीकविट्ठल के है 1– सद्रागचन्द्रोदय, 2–रागमाला, 3–रागमंजरी। एक ग्रन्थ श्रीकण्ठ द्वारा रचित प्राप्त होता है जिसे रसकौमुदी के नाम से जाना जाता है। 17वी श्ताब्दी के अंतिम दशकों में पं0 भावभट्ट द्वारा तीन ग्रन्थों की रचना की गई जो कि इस प्रकार है– 1 अनूप संगीत विलास, 2–अनूप संगीतरत्नाकर तथा 3–अनूप संगीतांकुश और मध्यकालिक ग्रन्थों की श्रंखला में पांच ऐसें ग्रन्थ है जिनका शुद्ध सप्तक काफी थाट के अनुरूप है और यह उत्तर भारतीय संगीत पर अवलम्बित है। 1–'रागतरंगिणी' कविलोचन (1685 ई0), 2–'संगीत परिजात' पं0 अहोबल (1650 ई0), 3–'रागतत्त्वविबोध', पं0 श्रीनिवास (1660 ई0), 4–'हृद्यकौतुक' पं0 हृद्यनारायणदेव, तथा 5–'हृद्यप्रकाश', पं0 हृद्यनारायणदेव, (1667 ई0)।"[5]

इन सभी ग्रन्थों के संकलन व प्रकाशन हेतु पं0 भातखण्डे जी ने पूरे देश की यात्राऐं की तथा इन ग्रन्थों की प्रतियां जहां–तहां पुस्तकालयों, संग्रहालयों तथा विद्वानों के पास जिस रूप में उपलब्ध थी उसका संग्रह किया। इस ज्ञानयज्ञ में इनका सहयोग इनके बम्बई के एक मित्र श्री नारायण शांताराम पाटनकर जी के परिवार ने किया। नारायण शांताराम जी एक प्रतिष्ठित सरकारी वकील थे। इनकी पुत्री धाकली बाई थी तथा इनके पति श्री सीताराम सुकथनकर जी हुए। पं0 भातखण्डे जी इस परिवार के संरक्षक रहे तथा मध्यकालिक ग्रन्थों के प्रकाशन कार्य में सुकथनकर परिवार ने अतुलनीय कार्य किया। आज मूलरूप में प्राप्त मध्यकालिक ग्रन्थों के प्रकाशन का श्रेय धाकलीबाई के पुत्र श्री भालचन्द्रसीताराम सुकथनकर जी को जाता है और इनके द्वारा ही भातखंडे जी के ग्रन्थों का प्रकाशन किया गया जिनमे अभिनवराग मंजरी, (1921) और श्रीमल्लक्ष्यसंगीतम् जिसकी रचना संस्कृत में सन् 1909 ई0 में की गई तथा जिसकी मराठी में टीका हिन्दुस्तानी संगीत पद्धत्ति के नाम से चार भागों में प्रकाशित की गई, जिसका अनुवाद और प्रकाशन बाद में संगीत कार्यालय हाथरस उ0प्र0 द्वारा भातखण्डे संगीत शास्त्र के नाम से चार भागों में किया गया। संगीत के प्रचार प्रसार में पं0 भातखण्डे जी के योगदान की तुलना की नही जा सकती है क्योंकि ग्रन्थ परंपरा के अभाव में शास्त्रीय संगीत को आधार कैसे मिलता ? अतः उनके इस अनुपम कार्य के लिये संगीत जगत सदैव उनका ऋणी रहेगा।

बीते हुए काल में वर्तमान समय जैसी परिस्थिति तथा तकनीकी साधनों के अभाव में इतना बड़ा कार्य संगीत जगत में हुआ जबकि न आज जैसी यातायात व्यवस्था थी न ही संचार के साधन सुलभ थे। प्रकाशन के क्षेत्र में संगीत जगत में स्वतंत्रता के पश्चात अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य किए गए। संगीत की संस्थागत शिक्षा के प्रादुर्भाव के साथ ही संगीत के क्षेत्र में प्रकाशन का कार्य व्यापक हुआ तथा विगत कई वर्षों सें संगीत की पुस्तकों का लेखन और शोधकार्य निरन्तरता के साथ होने लगा।

संगीत में प्रकाशन की वर्तमान स्थितिः

आज संस्थागत शिक्षण प्रणाली में संगीत एक स्वतन्त्र विषय के रूप में विश्वविद्यालयी स्तर तक प्रतिष्ठित हो चुका है और वर्तमान में अनेक शोधकार्य संगीत पर किए जा रहे है। संगीत विषय के लिए पाठ्यक्रम के अनुरूप अध्ययन सामग्री का विस्तार पुस्तकों के माध्यम से हो रहा है। कार्यक्रमों के साथ–साथ संगीत शास्त्र विषयक गोष्ठियों का आयोजन राष्ट्रीय व अंतराष्ट्रीय स्तर पर हो रहा है जिनमें विषय–विशेषज्ञों के विचारों का निष्कर्ष सम्पादित कर प्रकाशन के क्षेत्र में नए आयाम विकसित हो रहे है। संगीत कार्यालय हाथरस विगत कई वर्षो से संगीत की पुस्तकों का प्रकाशन कर्मठता के साथ कर रहा है। संगीत के लिए मासिक पत्रिकाओं का भी संचालन हो रहा है जिनमें संगीत कार्यालय हाथरस से संपादित 'संगीत' मासिक पत्रिका का लगभग 82 वर्षों से नियमित प्रकाशन हो रहा है। वर्तमान मे गंधर्व मंडल, मिरज से प्रकाशित 'संगीत कला विहार', संगीत रिसर्च अकादमी कोलकाता की 'निनाद', उ0प्र0 संगीत नाटक अकादमी की 'छायानट' पत्रिका, केन्द्रीय संगीत नाटक अकादमी की 'संगना', आदि पत्रिकायें संगीत जगत की सेवा कर रही है। इसके साथ ही केन्द्रीय सूचना प्रसारण मंत्रालय द्वारा संचालित 'आजकल' तथा भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद से प्रकाशित 'गगनांचल' पत्रिकाओं में संस्कृति, साहित्य व संगीत के लिये स्तम्भ होता है।

आज का युग तकनीकी युग है। आज संचार माध्यम, सूचना तकनीकी और कम्प्यूटर ने संसार को नई दिशा दी है। परिवर्तन संसार का नियम है और संगीत भी समय चक्र के साथ चलकर पविर्तनशीलता के प्रभाव से अछूता नही रहा। आज वर्तमान समय में जहां एक ओर साधनों का विकास हो रहा है वहीं साधना के अभाव में कला व साहित्य का स्तर गिरता जा रहा है। आज इंटरनेट व संचार साधनों नें समस्त विश्व को एक सूत्र में पिरोया है। तकनीकी दृष्टिकोण से यह प्रगति अभूतपूर्व है किन्तु चिन्तनीय यह भी है कि कहीं इस दौड़ में हम अपना अस्तित्व तो नहीं खोते जा रहें है। हम इसके लिए तकनीकी जगत को दोष नही दे सकतें है क्योंकि उपभोक्तावादी ताकतों ने बाजार में अपनी पैठ बनाई है और इस कारण संगीत को मात्र व्यवसायिकता की दृष्टिकोण से देखने वालों ने संगीत शिक्षा व प्रकाशन को प्रभावित किया है। किसी विषय को समुन्नत तथा सुदृढ़ रूप से विकसित करनें में उस विषय में किये जा रहे शोध का अपना महत्व होता है।

आज संगीत के क्षेत्र में प्रकाशन के कार्य में शोध और मौलिकता का अभाव होता जा रहा है। शोध व्यक्तिगत लाभ के उद्देश्य से न होकर उसकी दिशा बहुजन हिताय के रूप में परिलक्षित होनी चाहिए। संगीत के क्षेत्र में शोधकार्य शास्त्र उन्मुख होने चाहिए जिससे जिन विद्वानों ने हमारी धरोहर का संरक्षण किया उसे हम आगे बढ़ायें। आज भी मध्यकाल मे रचे गए ग्रन्थ संस्कृत में होने के कारण उनके अभिप्राय को संस्कृत न जानने वाले संगीत विद्वान उसका पूर्ण लाभ नही ले पा रहे है और यही हाल उर्दु–फारसी ग्रन्थों का है। इन ग्रन्थों का अनुवाद भी विद्वानों द्वारा करा के इन पर शोध कार्य की आवश्यकता है जिससे

संगीत विषय के बारे में शोधार्थियों और विधार्थियो को नवीन जानकारियां मिल सके। तकनीकी हमारी सहायक है और वर्तमान में शिक्षा के क्षेत्र में आधुनिक संचार व्यवस्था ने हमारे लिए नए मार्ग खोले है।

आधुनिक तकनीकी से संगीत ग्रन्थों का संरक्षण व प्रकाशनः

जरा कल्पना कीजिए यदि हम किसी पुस्तक को पढ़ना चाहे और वह हमें तत्काल ही उपलब्ध हो जाए तो इसके लिए आपको उन पुस्तकों का संग्रह करना पड़ेगा। पुस्तको के संग्रह हेतु उनके रखने का स्थान, उनके क्रय के लिए धन और उनके रखरखाव के लिए भी प्रबंध करना पड़ता है। परंपरागत तरीके से इस कार्य के लिए पुस्तकालय होते है जहां व्यापक रूप से पुस्तकों का संग्रह तथा प्रबंधन होता है। किन्तु एक निश्चित काल अवधि के पश्चात ग्रन्थों प पुस्तकों की स्थिति जर्जर होने लगती है क्योंकि कागज की एक आयुसीमा होती है, जिनमें महत्वपूर्ण पुस्तकों का पुनः प्रकाशन होता रहता है जिससे उनका नवीन संस्करण आने से वह पुनः स्थापित हो जाती है। हमारे संगीत ग्रन्थों का जिनका मूलरूप से प्रकाशन पं0 भातखण्डे जी के समय में हुआ उनमें से अधिकतर पुनः प्रकाशित नही हुए। बहुत सारे ग्रन्थ केवल संरक्षित कर रख लिए गए है और उनकी जगह पुस्तकालय से संग्रहालय हो चुकी है। यदि ये ग्रन्थ हमे सुलभ न हो तो संगीत जगत में होने वाले शोधकार्यों मे मौलिकता का अभाव होना ही है।

आज तकनीकी के माध्यम से इन ग्रन्थों का संरक्षण करना चाहिए और इस हेतु प्रयास हो भी रहें है। आज e-publication का युग है। संगीत ग्रन्थो को जो कि सर्वसुलभ नही है उन्हें Digital करने की आवश्यकता है तथा उन्हें "e-books"[8] के रूप में प्रकाशित करने की अत्यन्त आवश्यकता है। आज संगीत के कुछ मूल ग्रन्थों का digitilization किया जा चुका है। जिनमें उदाहरण स्वरूप **"संगीत रत्नाकर ग्रन्थ अड्यार सं0 "**[9] , तथा **"भातखण्डे संगीत शास्त्र"**[10] को इन्टरनेट के माध्यम से विश्व के किसी भी जगह प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार संगीत के क्षेत्र में तकनीकी का उपयोग संगीत के ग्रन्थों व संरक्षण के लिए किया जा सकता है। इस संबंध में University Grant Commission द्वारा शोधगंगा नामक एक project है जिसके द्वारा वर्तमान में हो रहे शोधकार्यों को ऑनलाइन प्रकाशित किया जा रहा है। इस बारे में संगीत के क्षेत्र में हुए पुराने शोधकार्यों को भी इस माध्यम से प्रकाशित करने की आवश्यकता है।

संगीत के क्षेत्र में जो पत्रिकाऐं अपना योगदान परंपरागत रूप से दे रही है उनका क्षेत्र या भाषा के कारण वितरण सीमित है जिसे आधुनिक तकनीकी के द्वारा प्रसारित करने की आवश्यकता है जिससे उसका लाभ समाज को मिल सके। आज अन्य विषयो में इन्टरनेट पर "e-journals"[11] का प्रभाव बढ़ा है क्योंकि यह सर्वसुलभ होने के कारण उपयोगी तकनीक है परंपरागत रूप से छपने वालें समाचार पत्र भी अपने e-paper के माध्यम से इन्टरनेट पर प्रकाशित करते है ताकि देश–विदेश में कहीं पर भी निवास करनें वाले लोगों के लिए यह सुलभ हो सके। e-journals के द्वारा प्रकाशन के क्षेत्र नवीन सूचना क्रान्ति का अभ्युदय हुआ है। संगीत के क्षेत्र में बहुत सी जानकारियां हमें इन्टरनेट के माध्यम से प्राप्त होती है किन्तु बहुत सी जानकारियां लोगों के अपने व्यक्तिगत विचार के माध्यम से प्रदर्शित की जाती है जिनमे कुछ गलत भी हो सकती है। हालांकि परंपरागत प्रकाशन का क्षेत्र भी इससे अछूता नही है। यहां संगीत विद्वानो का दायित्व बनता है कि आधुनिक तकनीक का उपयोग करके सही जानकारी शोधार्थियो को उपलब्ध करवाई जाए। इस संबंध में संगीत के क्षेत्र में Refreed E-Journal होने चाहिए जिनमें संगीत के उत्कृष्ट शोधपत्रों का प्रकाशन सुनिश्चित हो सके। संगीत के क्षेत्र में ऐसा एक प्रयास सर्वप्रथम "Sangeet Galaxy"[12] नाम के Refreed E-Journal www.sangeetgalaxy.co.in द्वारा हुआ है जिससें संगीत के कई शोधपत्र सन् 2012 से

प्रकाशित हो रहे है। संगीत रिसर्च अकादमी कोलकाता "ITCSRA"[13] द्वारा रागों और शास्त्र संबंधी जानकारी उनकी वेबसाइट के माध्यम सें प्रचारित हो रही है।

विचारणीय तथ्य यह है कि संगीत स्वयं में एक प्रतिठिष्त कला है जिसके शास्त्र पक्ष की ओर समन्वय की आवश्यकता है हमारा शास्त्र प्राचीनकाल से सदैव समुन्नत और श्रेष्ठ रहा है जिसे संरक्षित कर शोध द्वारा उनकी जटिलताओं को सुलझाना अभी शेष है। लक्षण से लक्ष्य की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होना चाहिए। संगीत के संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद करके उनका सरल भाषा में पुनः प्रकाशन हो तथा वह वर्तमान तकनीकी के माध्यम से सर्वसुलभ किए जाने चाहिए। संगीत में हो रहे शोधकार्यों मौलिकता व नवीनता बनी रहें इस हेतु संगीत ग्रन्थों का अध्ययन –अध्यापन होना चाहिए। नाट्यशास्त्र ग्रन्थ से लेकर अभिनवरागमंजरी तक के संस्कृत ग्रन्थों का संकलन व प्रकाशन हमारे पूर्व विद्वानों ने किया किन्तु तकनीकी साधन होते हुए भी आज कुछ ग्रन्थ पुनः प्रकाशन न होने के कारण अप्राप्य है उन्हें डिजिटल भी किया जाये हालांकि इस ओर प्रयास किए जा रहें है। संगीत शास्त्र व नवीनतम् शोध को संगीत साधकों, विद्वानों व जनमानस में सुलभ करने हेतु आज की आधुनिक तकनीक प्रकाशन के क्षेत्र में अहम भूमिका का निर्वाह कर सकनें मे सक्षम है।

कृतज्ञता एवं आभार —*प्रस्तुत शोधपत्र की रचना में मार्गदर्शन हेतु मैं संगीत विद्वजनों प्रो0 डॉ0 अमरेश चन्द चौबे जी, (अवकाश प्राप्त प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष गायन विभाग), प्रो0 डॉ0 अनिल बिहारी ब्योहार जी (विभागाध्यक्ष गायन विभाग), इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़, छत्तीसगढ़, डॉ0 तेजसिंह टाक जी, (अवकाश प्राप्त प्रवक्ता, गायन विभाग), भातखण्डे संगीत संस्थान समविश्वविद्यालय, संगीत समीक्षक पं0 विजयशंकर मिश्रा जी, तथा सम्पादन व परामर्श हेतु डॉ0 अमित कुमार वर्मा, (असिस्टेंट प्रोफेसर, विश्वभारती, शान्तिनिकेतन, पं0 बंगाल तथा सम्पादक Sangeet Galaxy कृतज्ञता एवं आभार प्रकट करता हूँ।*

सन्दर्भ सूची

1– क्रमिक पुस्तक मालिका चौथी पुस्तक पृष्ठ सं0 197–198, प्रकाशक संगीत कार्यालय हाथरस सं0 1999

2– नाट्यशास्त्र, भरतमुनि प्रथमोध्याय श्लोक सं0–117 पृष्ठ सं0–136 भाग–1 काशी सं0

3– भारतीय संगीत का इतिहास, ठाकुर जयदेव सिंह पृष्ठ सं0 297 प्रकाशक संगीत रिसर्च अकादमी कोलकाता, प्रथम सं0 1994

4– श्रीमतंगमुनिप्रणीता बृहद्देशी, प्रकाशक इदिंरा गांधी सेंटर फॉर दि आर्टस्, नई दिल्ली एवं मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्रा0 लि0, भाग–1 1992, तथा भाग–2 1994,

5– An Introduction by Dr. Premlata Sharma, page no.- xi, श्रीमतंगमुनिप्रणीत बृहद्देशी, प्रकाशक इदिंरा गांधी सेंटर फॉर दि आर्टस्, नई दिल्ली एवं मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स प्रा0 लि0, भाग–1 1992.

6– भारतीय संगीतशास्त्र ग्रन्थ परंपराः एक अध्ययन, प्रो0लिपिकादास गुप्ता, पृष्ठ सं0–99 काशी हिन्दु वि0वि0 प्रकाशन सं0 2009

7 – शोधपत्र में वर्णित ग्रन्थों के काल का सन्दर्भ डॉ0 तेजसिंह टाक जी की पुस्तक **"नेट संगीत"** के ग्रन्थ प्रकरण पृष्ठ सं0 167–177 से उदृहत है। प्रकाशक– बेकरा आलमी फाउण्डेशन, लखनऊ, सं0 2010

8- https://en.wikipedia.org/wiki/E-book

9- https://archive.org/stream/SangitaRatnakara/SangitaRatnakaraChapter1#page/n11/mode/2up

10- **https://archive.org/details/BhatkhandeSangeetShastraHindustaniSangeetPaddhatiIIIVNBhatkhande**

11- https://en.wikipedia.org/wiki/Electronic_journal

12- http://www.sangeetgalaxy.co.in/

13- http://www.itcsra.org/